अनेकान्त तीसरा नेत्र

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

यतः व्यक्ति की दो आंखें होती है। तीसरे नेत्र की बात कहा से आई? तीसरा नेत्र भीतर का नेत्र है– वह है अनेकान्त। अनेकान्त शब्द अनेक और अन्त दो शब्दों से मिलकर बना है। अनेक का अर्थ होता है–एक से अधिक। एक से अधिक दो भी हो सकते हैं और अनन्त भी। दो और अनन्त के बीच में अनेक कार्य संभव हैं तथा अन्त का अर्थ धर्म अर्थात् गुण है। प्रत्येक वस्तु में अनन्त गुण विद्यमान हैं, अतः जहाँ अनेक का अर्थ अनन्त होगा, वहाँ अन्त का अर्थ गुण लेना चाहिए। इस कथन के अनुसार अर्थ होगा अनन्तगुणात्मक वस्तु ही अनेकान्त है किन्तु जहाँ अनेक का अर्थ दो लिया जायेगा, वहाँ अन्त का अर्थ धर्म होगा तब यह कहा जायेगा कि परस्पर विरुद्ध प्रतीत होने वाले दो धर्मों का एक ही वस्तु में होना अनेकान्त है। जात्यन्तरभाव को अनेकान्त कहते हैं अर्थात् अनेक धर्मों या स्वादों के एक रसात्मक मिश्रण से जो जात्यन्तरपना या स्वाद उत्पन्न होता है, वही अनेकान्त शब्द का वाच्य है। जो तत् है वही अतत् है, जो एक है वही अनेक है, जो सत् है वही असत् है, जो नित्य है वही अनित्य है। इस प्रकार एक वस्तु में वस्तुत्व की उपजाने वाली परस्पर विरुद्ध दो शक्तियों का प्रकाशित होना अनेकान्त है। वस्तु का स्वरूप अनेकान्तात्मक है। प्रत्येक वस्तु अनेक गुण–धर्मों से युक्त है। अनन्त धर्मात्मक वस्तु ही अनेकान्त है। वस्तु का स्वरूप अनेकान्तात्मक है। वही वस्तु है और वही वस्तु नहीं है, वही वस्तु नित्य है और वही वस्तु अनित्य है, इस प्रकार अनेकान्त का प्ररूपण छल मात्र है। अनेकान्त छल रूप नहीं है, क्योंकि जहाँ वक्ता के अभिप्राय से भिन्न अर्थ की कल्पना करके वचन विघात लिया जाता है, वहाँ छल होता है। जैसे नवकम्बलो देवदत्तः यहाँ नव शब्द के दो अर्थ होते हैं–एक नव संख्या और दूसरा नया। तो नूतन विवक्षा कहे गये नव शब्द का नव संख्या रूप अर्थ विकल्प करके वक्ता के अभिप्राय से भिन्न अर्थ की कल्पना छल कही जाती है। किन्तु सुनिश्चित मुख्य गौण विवक्षा से संभव अनेक धर्मों का सुनिर्णीत रूप से प्रतिपादन करने वाला अनेकान्त छल नहीं हो सकता, क्योंकि इसमें वचनविघात नहीं किया गया है अपितु यथावस्थित वस्तुतत्व का निरूपण किया गया है। अर्थात् जो वस्तु जैसी है, उसको उसी अनुरूप उसी अभिप्रायपूर्वक कहने से छल का ग्रहण नहीं होता है। जो वस्तु तत् है वही अतत् है, जो एक है वही अनेक है, जो सत् है वही असत् है, जो नित्य है वह अनित्य है। इस प्रकार एक वस्तु में वस्तुत्व की उत्पादक परस्पर विरुद्ध दो शक्तियों का प्रकाशित होना अनेकान्त है। अनेकान्तवाद संशयवाद नहीं है। कुछ लोग संशयवाद का आरोप लगाते हैं। सामान्य धर्म का प्रत्यक्ष होने से विशेष धर्मों का प्रत्यक्ष न होने पर किन्तु उभय विशेषों का स्मरण होने से संशय होता है। जैसे धुंधली शक्ति में स्थाणु

और पुरुषगत ऊँचाई आदि सामान्य धर्म की प्रत्यक्षता होने पर स्थाणुगत कोटर पक्षिनिवास तथा पुरुषगत सिर खुजाना, कपड़ा हिलने आदि विशेष धर्मों के न दिखने पर किन्तु इन विशेषों का स्मरण रहने पर ज्ञान दो कोटियों में दोलायित हो जाता है कि यह स्थाणु है या पुरुष। किन्तु अनेकान्तवाद में विशेष धर्मों की अनुपलब्धि नहीं है। सभी धर्मों की सत्ता अपनी—अपनी निश्चित अपेक्षाओं से स्वीकृत है। तत्तद् धर्मों का विशेष प्रतिभास निर्विवाद सापेक्ष रीति से बताया गया है। संशय का यह आधार भी उचित नहीं है कि अस्ति आदि धर्मों को पृथक्—पृथक् सिद्ध करने वाले हेतु हैं या नहीं? यदि नहीं हैं तो प्रतिपादन कैसा? यदि हैं तो एक ही वस्तु में परस्पर विरुद्ध धर्मों की सिद्धि होने पर संशय होना ही चाहिए, क्योंकि यदि विरोध होता तो संशय होता। किन्तु अपनी—अपनी अपेक्षाओं से संभावित धर्मों में विरोध की कोई संभावना ही नहीं है। जैसे एक ही देवदत्त भिन्न—भिन्न पुत्राादि संबंधियों की दृष्टि से पिता, पुत्र, मामा आदि धर्मों का एक वस्तु में रहने में कोई विरोध नहीं है। देवदत्त यदि अपने पुत्र की अपेक्षा पिता है तो सबकी अपेक्षा पिता नहीं हो सकता। जैसेकि एक ही हेतु सपक्ष में सत् होता है और विपक्ष में असत् होता है, उसी तरह विभिन्न अपेक्षाओं से अस्तित्व आदि धर्मों के रहने में भी कोई विरोध नहीं है। वस्तु अनन्त धर्मात्मक है एवं प्रत्येक वस्तु किसी—न—किसी अपेक्षा से सत्य है। भेद ज्ञान से अनेक और अभेद ज्ञान से एक है। ऐसा भेदाभेद ग्राहक ज्ञान ही सत्य है। जो लोग इनमें से एक को सत्य मानकर दूसरे में उपचार का व्यवहार करते हैं वह मिथ्या है, क्योंकि दोनों धर्मों में से एक का अभाव मानने पर दूसरे का भी अभाव हो जाता है। दोनों का अभाव ही हो जाने पर वस्तुतत्त्व अनुपाख्य अर्थात् निःस्वभाव हो जाता है। यदि वस्तु सर्वथा नित्य हो तो वह उदय अस्त को प्राप्त नहीं हो सकती और न उसमें क्रियाकारक की ही योजना बन सकती है। जो सर्वथा असत् है उसका कभी जन्म नहीं होता और जो सत् है उसका कभी नाश नहीं होता। दीपक भी बुझने पर सर्वथा नाश को प्राप्त नहीं होता किन्तु अंधकार रूप पर्याय को धारण किये हुए अपना अस्तित्व रखता है। वास्तव में विधि और निषेध दोनों कथंचित् इष्ट हैं। विवक्षावश उनमें मुख्यगौण की व्यवस्था होती है। अनेकान्त जैनदर्शन का हृदय है। सकल जैन साहित्य अनेकान्त के रूप में कथित है। अनेकान्त स्याद्वाद को समझे बिना जैनदर्शन को समझ पाना तो दुष्कर है, उसमें प्रवेश पाना भी कठिन है। अनेकान्त दृष्टि एक ऐसी दृष्टि है, जो वस्तुतत्त्व को उसके समग्र स्वरूप के साथ प्रस्तुत करती है। जैन दर्शन के अनुसार वस्तु बहुआयामी है। वस्तु में परस्पर विरोधी अनेक गुणधर्म व्याप्त हैं। एकान्त दृष्टि से वस्तु का समग्र बोध नहीं कर सकते हैं। वस्तुतत्त्व के समग्र बोध के लिए समग्र दृष्टि अपनाने की जरूरत है और वह अनेकान्त दृष्टि अपनाने पर ही संभव है। भारतीय साहित्य में स्याद्वाद, अनेकान्तवाद और सापेक्षवाद के बिना शुरुआत ही नहीं हो सकती और न ही हम वक्ता लोग बिना सापेक्षवाद के किसी को कुछ बता सकते हैं। स्याद्वाद यह स्यात्+वाद इन दो शब्दों से मिलकर बना है। स्याद् यह शब्द निपात अव्यय है। वाद—कथन करना, मान्यता आदि

धर्मों के रूप में ज्ञात होता है। जैन दर्शन में इसका प्रयोग अनेकान्त के अर्थ में भी होता है। स्याद्वाद अर्थात् अनेकान्तात्मक वाक्य। स्याद्वाद अनेकान्त दृष्टि को वाणी द्वारा व्यक्त करने की पद्धति है। अनन्त धर्मात्मक द्रव्य का किसी एक धर्म के माध्यम से प्रतिपादन करना स्याद्वाद है, समग्र द्रव्य के प्रतिपादन का नाम स्याद्वाद है। स्याद्वाद पद का अर्थ हुआ सापेक्ष सिद्धान्त, अपेक्षावाद, कथंचित्वाद या वह सिद्धान्त, जो विविध दृष्टि बिन्दुओं से वस्तुतत्त्व का निरीक्षण परीक्षण करता है। अनेकान्त की अभिव्यक्ति को स्याद्वाद कहते हैं। इसको सापेक्षवाद भी कहते हैं। अनेकान्त सबको जोड़ता है तोड़ता नहीं। भगवान् महावीर ने अनेकान्त का जो सिद्धांत दिया है वह तीसरा नेत्र है। इसमें विवाद को जगह नहीं है। विवाद बुद्धि के स्तर पर होता है प्रज्ञा के स्तर पर विवाद समाप्त हो जाता है। सबको साथ लेकर चलने के लिए अनेकान्तवाद को स्वीकार करना पड़ेगा। शांतिपूर्ण सहअस्तित्व के लिए अनेकान्तवाद का सिद्धान्त सबसे उपयोगी है। सबका साथ सबका विकास अनेकान्तवाद से सम्भव है। यह जोड़ने का सिद्धान्त है अनेकान्तवाद अनाग्रह है।